National Journal of Multidisciplinary Research and Development
ISSN: 2455-9040
Impact Factor: RJIF 5.22
www.nationaljournals.com
Volume 2; Issue 3; September 2017; Page No. 586-587

विशिष्ट बालक एवं समावेशी शिक्षा

डॉ0 गीता दहिया
प्राचार्य, नेशनल टी. टी. कॉलेज फॉर गर्ल्स, अलवर, राजस्थान, भारत।

प्रस्तावना

प्रत्येक व्यक्ति के लिए शिक्षा एवं निर्देशन का किसी न किसी क्षेत्र में किसी दृष्टि से महत्त्व होता हैं, परन्तु फिर भी सामान्य व्यक्तियों की अपेक्षा, कुछ विशिष्ट समूहों से सम्बन्धित बालकों के लिए शिक्षा एवं निर्देशन की अनिवार्य रूप से आवश्यकता होती हैं। इन विशिष्ट समूहों के अर्न्तगत प्रतिभाशाली, मन्दबुद्धि, बाल–अपराध, विकलांग एवं अनुसूचित जाति एवं जनजाति के व्यक्तियों को सम्मिलित किया जाता है। प्रतिभाशाली बालकों को सामान्य वर्ग के बालकों की अपेक्षा अधिक शिक्षा एवं निर्देशन कि आवश्यकता अनुभव होती है। उनकी प्रतिभा का समुचित विकास हो सके तथा उस प्रतिभा के द्वारा समाज एवं राष्ट्र की प्रगति सम्भव हो सके, इसके लिए उनके प्रगति पथ पर आने वाली समस्याओं का समाधान आवश्यक होता हैं। इसी प्रकार शेष समूहों के व्यक्तियों में किसी भी प्रकार की हीन भावना उत्पन्न न हों, उसके विकास की प्रक्रिया के निरन्तर उत्पन्न होने वाले अवरोध उन्हें निराश व हताश न कर सकें इस हेतु उन्हें समयानुरूप शिक्षित व निर्देशित करना आवश्यक है।

''विशिष्ट बालक'' शब्द न केवल मानसिक रूप से संवेगात्मक शारीरिक या मानसिक रूप से विकलांग बालकों के लिए ही प्रयोग होता है। अपितु उन बालकों के लिए भी होता हैं, जो बौद्धिक दृष्टि से विशिष्ट होता हैं जैसे प्रतिभाशाली बालक या विशिष्ट बालकों को विशेष शिक्षा की आवश्यकता होती हैं जो विभिन्न वर्गो के लिए विशेष रूप से नियोजित होती हैं। इस प्रकार की शिक्षा सामान्यतः अलग कक्षाओं या अलग विद्यालयों में दी जाती हैं। इन विद्यालयों के अध्यापक भी विशेष रूप से प्रशिक्षित होते है।

यदि विशिष्ट बालकों की शिक्षा का इतिहास समझे तो सभी सभ्यताओं और संस्कृतियों ने शिक्षा की सामाजिक और सांस्कृतिक महत्ता को स्वीकार किया है। भारतीय संस्कृति में भी प्राचीन काल से ही शिक्षा को सर्वोपरि स्थान दिया गया है। भारतीय विचारकों ने सामाजिक और व्यक्तिगत जीवन में शिक्षा की भूमिका और महत्ता पहचानते हुए उसे वह मूल उद्‌गम माना है जहॉ से परिवर्तन के रास्ते खुलते हैं। पाश्चात्य सभ्याताओं के मनीषियों ने भी वृहत्तर सामाजिक परिवर्तन की भूमिका के रूप में शिक्षा को चिन्हित किया है और शिक्षा से स्वतंत्र और पूर्णतर मनुष्य बनने की बात कही है। बहुत–से शिक्षा दार्शनिको का मानना है कि शिक्षा समाज में अन्यायपूर्ण एवं अनैतिक संरचनाओं को समाप्त करने और आर्थिक रूप से पिछड़े तबकों को वैयक्तिक और सामाजिक मुक्ति के लिए बौद्धिक चितंन और कौशलों से युक्त करती है। ये सभी ऐसे तर्क हैं जो स्कूली शिक्षा को वैधता प्रदान करते हैं।

यदि स्कूली शिक्षा के इतिहास पर नजर डालें तो यह स्पष्ट होता है कि स्कूली शिक्षा ने एक हद तक अवसरों की समानता प्रदान करने सामाजिक गतिशीलता और परिवर्तन को संभव बनाने में मदद की हैं। परंतु प्रश्य यह है कि क्या स्कूली शिक्षा समाज के हर वर्ग के हर बच्चे तक पहुॅच पाई है? विशेषकर भिन्न रूप से सक्षम बच्चों के संदर्भ में यह सवाल और भी महत्त्वपूर्ण हो जाता है।

क्या विद्यालयी शिक्षा व्यवस्था विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की शारीरिक संवेदनात्मक एवं बौद्धिक जरूरतों को ध्यान रख पाने में सक्षम हो पाई है?

इस सवाल का उत्तर परिवर्तन के उन सभी दौरो में निहित है जिनसे होकर स्कूली शिक्षा व्यवस्था गुजरी है। विशेष आवश्यकता वाले चुनौतीपूर्ण बच्चों की शिक्षा के संदर्भ में भारत में लागू प्रावधानों की प्रवृति यह दर्शाती है कि 1970 से पहले प्रमुख नीतियों का झुकाव 'पृथक्करण' या अलग किए जाने की और था। अनेक प्रशिक्षकों का विश्वास था कि शारीरिक, भावात्मक, बौद्धिक रूप से चुनौतीपूर्ण बच्चे इतने अलग थे कि वे एक सामान्य स्कूल की गतिविधियों में भाग नहीं ले सकते थे। इससे पहले मिशनरियों द्वारा 1880 के दशक में दया की भावना के आधार पर इन बच्चों के लिए पृथक रूप से विद्यालय खोले गए थे।

1990 के दशक में सलमांका में हुई विश्व कॉन्फ्रेंस के बाद 'समावेशी' सभी बच्चों की शिक्षा के लिए प्रभावशाली नीति के रूप में उभरा। आज के समय की मॉग यह है कि एक लचीली, व्यापक और संतुलित पाठ्यचर्या बने जो सभी बच्चों की आवश्यकता को पूरा कर सके। एक समावेशी पाठ्यचर्या ऐसे स्कूलों की आवश्यकता को मान्यता देती है जो विद्यार्थियों के वैयक्तिक अंतरो को ध्यान देती है जो विद्यार्थियों के वैयक्तिक अन्तरों को ध्यान में रखती हो और इतनी लचीली हो कि विद्यार्थी अपने लक्ष्यों को पाने में समर्थ हो सकें।

'समावेशन' शब्द का अपने आप में खास अर्थ नहीं है। समावेशन के चारों तरफ जो वैचारिक, दार्शनिक, शैक्षिक ढॉचा होता है वहीं समावेशन को परिभाषित करता है। समावेशन की प्रक्रिया में बच्चें को न केवल लोकतंत्र की भागीदारी के लिए सक्षम बनाया जा सकता है बल्कि यह सीखने एवं विश्वास करने के लिए भी सक्षम बनाया जा सकता है कि लोकतंत्र को बनाए रखने के लिए दूसरों के साथ रिश्ते बनाना अन्तःक्रिया करना भी समान रूप से महत्त्वपूर्ण हैं।'' (एन.सी.एफ. 2005 पृष्ठ 96)

भारत में वर्तमान स्थिति यह है कि जहॉ एक और सभी विद्यालयों को 'समावेशी' बनाने पर जोर दिया जा रहा है, तो दूसरी ओर 'विशेष स्कूल' भी विशेष जरूरतों वाले चुनौतीपूर्ण बच्चों की शिक्षा संबंधी जरूरतो को पूरा कर रहें हैं। बहुत से बच्चे यहॉ दाखिला लेते हैं और विशेष सुविधाओं का लाभ उठाते हैं। ये विद्यालय जिन्हें खास संदर्भो में 'विशेष' या 'स्पेशल' स्कूल कहा जाता है, विकलांगता के आधार पर बच्चों की शारीरिक और मानसिक

जरूरतों को ध्यान में रखते हुए कुछ विशेष प्रावधान जुटाते हैं **जैसे–**

- विशेष प्रकार की ढॉचागत सुविधाएँ जो विकलांगता के प्रकार के अनुसार बच्चों की जरूरतों को पूरा करती हैं, जैसे– दृष्टि बाधित विद्यालयों की सुविधाएँ।
- जरूरतों के आधार पर विशेष रूप से प्रशिक्षण प्राप्त शिक्षक जैसे– मूक बधिर बच्चों के लिए अलग से शिक्षक।
- विशेष प्रकार के उपकरण जो विकलांगता को ध्यान में रखते हुए बच्चों को विशेष सुविधा देते हों जैसे– ब्रेल लिपि में पुस्तकें, सॉफ्टवेयर जॉब आदि।
- अलग तरह की शिक्षण पद्धतियॉ जैसे– संकेत भाषा का प्रयोग।
- जरूरतों को ध्यान में रखते हुए खेल एवं मनोरंजन के उपकरण।
- विशेष रूप से तैयार की गई शिक्षण साम्रगी जैसे उभरे हुए नक्शे, ऑडियों पुस्तकें आदि।
- आवश्यकता के आधार पर पाठ्यपुस्तकें।

उपरोक्त प्रावधानों को देखा जाए तो वर्तमान परिप्रेक्ष्य में हम सभी विद्यालयों को ऐसे रूप में परिलक्षित कर रहें हैं जहॉ पर बच्चें की विभिन्नताओं (शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, आर्थिक, लैगिंक आदि) के होते हुए भी उन्हे सभी के साथ मिलकर ज्ञान सृजन करने के समान अवसर मिल सकें। उनकी वैयाक्तित्व आवश्यकताओं के अनुरूप उन्हें कक्षा–कक्ष में उचित वातावरण मिल सके ताकि वे आत्म–विश्वास, आत्मसम्मान, सकारात्मक सोच, प्रभावी सम्प्रेषण आदि गुणों को स्वयं में विकसित करते हुए उनका सम्पूर्ण व्यक्तित्व विकास की और अग्रसर हो सकें।

इसी परिप्रेक्ष्य को समझने हेतु समावेशी शिक्षा को प्रभावी बनाने हेतु महत्त्वपूर्ण सुझाव–

- समावेशित शिक्षा में विद्यालय वातावरण महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है जिसमें विशिष्ट बालकों हेतु साजो–समान, शैक्षिक सहायता, उपकरण, संसाधन, भवन आदि का समुचित प्रबंधं आवश्यक हैं।
- विद्यालय केवल विशेष बालकों हेतु न होकर, सबके लिए विद्यालय हो जिससे विशिष्ट बालकों मे असहजता व कुण्ठाग्रस्त रहने की प्रवृति का विकास न हो सके। इस हेतु शिक्षा के अधिकार अधिनियम, 2009 में प्रभावी कदम उठाया गया है, परन्तु इसका क्रियान्वयन सुचारू रूप से नहीं हो सका हैं।
- समावेशित शिक्षा के अन्तर्गत आवश्यक है कि विद्यालय पाठ्यक्रम बालकों की अभिवृत्तियों, मनोवृत्तियों, आकांक्षाओं तथा क्षमताओं को ध्यान में रखते हुए निर्धारित किया जाना चाहिए तथा पाठ्यक्रम में लचीलापन लाकर बालक की क्षमता, आवश्यकता, रूचि के अनुकूल परिवर्तन किया जा सकें।
- समावेशित शिक्षा में उचित मार्गदर्शन व निर्देशन हेतु नियमित शिक्षक, विशेष शिक्षक, अभिभावक और परिवार, समुदायिक अभिकरणों के साथ विद्यालय कर्मचारियों के बीच सहयोग और सहकारिता शामिल होनी चाहिए जिससे विशिष्ट बालकों का सही दिशा में मार्गदर्शन हो सके।
- विशिष्ट बालक में आत्मविश्वास, समायोजन की कमी होती है इस हेतु विद्यालयों को प्रारम्भिक कक्षाओं में उचित मार्गदर्शन व उचित वातावरण उपलब्ध कराना चाहिए जिससे बालक असहज, सहमा व कुण्ठित न रह सके।
- समावेशित शिक्षा की सफलता हेतु इसमें तकनीकी का समावेश किया जाना चाहिए जिसमें टी.वी., कम्प्यूटर, मोबाइल फोन, सहायक अनुदेशन शिक्षा महत्त्वपूर्ण उपकरण सिद्ध हो सकते हैं।
- समावेशित शिक्षा हेतु विद्यालयों को सामुदायिक जीवन का केन्द्र बनाया जाना चाहिए जिसमें समय–समय पर सांस्कृतिक कार्यक्रम, वाद–विवाद, खेलकूद, देशाटन जैसे कार्यक्रमों का आयोजन कर अभिभावक समाज के अन्य व्यक्तियों को आमंत्रित करना चाहिए जिससे बालक स्वयं की प्रतिभा से स्वपरिचित हो सके।
- समावेशित शिक्षा व्यवस्था के अन्तर्गत शिक्षकों की जिम्मेदारी बढ़ जाती है क्योंकि समावेशित शिक्षा केवल शिक्षण तक ही सीमित नहीं बल्कि यह बालक के व्यवहार से लेकर उसके वृद्धि व विकास के निर्माण तक चलायमान है इसलिए शिक्षक को विशिष्ट सामग्री की जानकारी हो, जिससे वह बालक के प्रति स्वस्थ व सकारात्मक अभिवृति रख सके व उसका मनोविज्ञान समझ सके।

अन्ततः यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगी की– ''समावेशन की नीति को हर स्कूल एवं सारी शिक्षा व्यवस्था में व्यापक रूप से लागू किए जाने की जरूरत है। बच्चे के जीवन के हर क्षेत्र में चाहें वह स्कूल में हो या बाहर, सभी बच्चों की भागीदारी सुनिश्चित किए जाने की जरूरत है। स्कूलों को ऐसे केन्द्र बनाए जाने की आवश्यकता है जहॉ बच्चों को जीवन की तैयारी कराई जाएँ और यह सुनिश्चित किया जाए कि सभी बच्चे खासकर शारीरिक और मानसिक रूप से असमर्थ बच्चों और कठिन परिस्थितियों में जीने वाले बच्चो की इस क्षेत्र के सबसे ज्यादा फायदे मिल सकें। (एन. सी.एफ. 2005 पृष्ठ सं. 96)

"Inclusion is not simply about physical proximity. It is about intentionally planning for the success of all students."

संदर्भ

1. डॉ. आर. ए. शर्मा., डॉ. शिखा चतुर्वेदी। निर्देशन एवं परामर्श के मूल तत्व'' पृष्ठ संख्या 166 एवं 168।
2. (1)एन.सी.एफ. 2005, पृष्ठ 96।
3. भारतीय आधुनिक शिक्षा, अंक 1, वर्ष 32, पृष्ठ 62एवं63 4– (2) एन.सी.एफ. 2005, पृष्ठ 96
4. श्रीमती कल्पना गोयल एवं श्रीमती राखी भार्गव, ''विशिष्ट बालक (उनकी शिक्षा एवं पुनर्वास), एच. पी. प्रकाशन, आगरा।